International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN : 2581-9925, Impact Factor: 6.882, Volume 04, No. 04(II), October - December, 2022, pp. 297-303

भारत की जापान के प्रति विदेश नीति

डॉ. गुरूदत्त स्वामी*

सार

भारत एशिया महाद्वीप में स्थित सबसे बडा लोकतान्त्रिक और उभरता हुआ शक्तिशाली राष्ट्र हैं इसी प्रकार जापान भी तकनीकी रूप से सम्पन्न विकसित राष्ट्र है। भारत और जापान सांस्कृतिक तथा आर्थिक दृष्टि से सदैवे एक दूसरे के निकट रहे है। भारत अपनी विदेश नीति के सिद्धान्तों (शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व, परमाणु निःसस्त्रीकरण) के कारण विश्व शान्ति का अग्रदूत कहलाता है। वही जापान ने भी द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद विश्व शांति तथा आर्थिक विकास पर बल दिया जिसे योशिदा सिद्धान्त कहा जाता है। भारत और जापान संबंधो में द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद से वर्तमान तक उतार–.चढाव देखने को मिलते है। संबंधो में कडवाहट परमाणु परीक्षणों को लेकर उत्पन्न हुई लेकिन उदारीकरण के दौर (1991) में जापान ने भारत को 500 मिलियन डॉलर की सहायता देकर संबंधो में सुधार करके विदेशिका संबंधो को एक नया रूप दिया। 2007 में शिजो अंबे द्वारा भारतीय संसद में सयुक्त सत्र को संबोधन व 2010 में प्रधानमंत्री योशिरो मोरी की दिल्ली यात्रा ने संबंधो को सही दिशा प्रदान की। 2011 में प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह द्वारा जापान के साथ किया गया द्विपक्षीय व्यापार समझौता और प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी द्वारा जापान के साथ किया गया परमाणु ऊर्जा के शान्तिपूर्ण उपयोग का समझौता वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में विदेश नीति के नये आयाम स्थापित करेगा।

शब्दकोशः *विदेश नीति, सहअस्तित्व, परमाणु निःसस्त्रीकरण, विश्व शांति, आर्थिक विकास, उदारीकरण।*

प्रस्तावना

भारत एशिया महाद्वीप का एक प्रमुख देश है। भारत पूर्ण रूप से उत्तरी गोलार्ध में स्थित है। देश का विस्तार 8.4 से 37.6 उत्तरी अक्षांश 68.7 से 97.25 पूर्वी देशान्तर पर है।[1] भारत का क्षेत्रफल 3.287,240 वर्ग किमी है। भौगोलिक विस्तार में भारत विश्व में 7 वे स्थान पर है। हिमालय पर्वत श्रृंखला भारत को मध्य एशिया व चीन से अलग करती है। भारत के तीन तरफ समुद्र है। इस भौगोलिक बनावट के आधार पर इसे भारतीय उपमहाद्वीप कहा गया, परन्तु पश्चिमी विद्वानों ने भारत के महत्व को कम करने के लिए इस क्षेत्र को दक्षिणी एशिया कहा है।

भारत विभिन्न कारणों से महत्वपूर्ण देश रहा है। इसका इतिहास, भौगोलिक स्थिति, प्राचीन विरासत व मजबूत आर्थिक स्थिति ने इसे और महत्वपूर्ण देश बनाया है। विदेशों द्वारा भारत के आर्थिक शोषण व विदेशी शासन व पराधीनता से भी भारत का महत्व कम नही हुआ। भारत की विदेश नीति के निर्णयों की तरफ पुरी दुनिया के देश देखते रहे है। भारतीय विदेश नीति के कुछ सिद्धान्त तो इतने महान है कि उनका दुनिया में कोई मुकाबला नही है। शान्ति, सहअस्तित्व, निशस्त्रीकरण, गुट निरपेक्षता, साम्राज्यवाद व उपनिवेशवाद का विरोध, रंगभेद का विरोध व एशिया – अफ्रीका की एकता आदि भारतीय विदेश नीति के सिद्धान्त पूरी दुनिया में श्रेष्ठ, अद्वितीय व महान है।

---

* सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान, राजकीय महाविद्यालय, खेरवाड़ा, उदयपुर, राजस्थान।

विदेशी शासन, आर्थिक शोषण, साम्राज्यवाद व उपनिवेशवाद के कारण भारत आधुनिक युग में अधिक आर्थिक विकास नही कर पाया, इस कारण भारत विकासशील देश है। भारत की आर्थिक स्थिति का प्रभाव इसकी विदेश नीति व द्विपक्षीय संबंधो पर पडा है। विकसीत व धनी देशो में भारत की कमजोर आर्थिक स्थिति के कारण इसे अधिक महत्व नहीं दिया, इससे भारत अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में पिछड गया। भारत अपनी विदेश नीति के राजनीतिक सिद्धान्तों में तो विश्व में महत्वपूर्ण रहा है, परन्तु आर्थिक सिद्धान्तों में कमजोर रहा है। जिनका न तो दुसरे देशों पर प्रभाव है और न ही भारत का स्वयं का हित हुआ है। भारत अतीत में जब शक्तिशाली था तब दुसरे देशों पर आधिपत्य व व्यापार से लाभ कमाकर आर्थिक शोषण की नीति नहीं अपनायी, बल्कि समानता अहस्तेक्षप दूसरे देशों के प्रति सम्मान की विदेश नीति अपनायी। भारत की विदेश नीति में स्वार्थ संकीर्णहित आदि नही झलकते। भारत ने हमेशा व्यापक हितों के बारे में सोचा है। इसी कारण भारत की विदेश नीति की विश्व में पहचान है। भारत की विदेश नीति में राजनीतिक सिद्धान्तों के साथ आर्थिक, सांस्कृतिक, मानवतावादी व विश्व कल्याण के सिद्धान्तों का समन्वय है।

आधुनिक काल में भारत में ब्रिटिश शासन काल के समय सर्वप्रथम रविन्द्रनाथ टैगोर ने जापान का महत्व समझा था व भारत की मित्रता पर बल देते हुए एशिया पर बल दिया था। 1945 से पूर्व जापान एक भिन्न प्रकार का राज्य था, वह धुरी राष्ट्रों के साथ रोम बर्लिंग धुरी से जुडा हुआ था। जापान ने 1945 से पूर्व सैनिकवादी नीति अपनायी थी जिसे भारत ने पसन्द नहीं किया था। यद्यपि जापान ने ही अन्त में अमेरिका की सेना के सामने आत्म समर्पण किया था। जब अमेरिका ने 6 व 9 अगस्त 19455 को हीरोशिमा व नागासाकी पर परमाणु बम गिराये तो भारत ने इसका विरोध किया था। जापान ने अमेरिकी सर्वोच्चता स्वीकार पर अपनी सुरक्षा की जिम्मेदारी भी अमेरिका पर ही डाल दी। भारत ने इसका भी विरोध किया व जापान द्वारा स्वयं अपनी रक्षा का दायित्व नहीं निभाया गया। जापान का वर्तमान संविधान, अमेरिका के बीच 1951 में हस्ताक्षरित इसमें सैन फ्रांससिसको संधि में भारत शामिल नही हुआ, इसमें 41 देशों ने हस्ताक्षर किये थे क्योंकि यह अमेरिका की हस्तक्षेप नीति का विस्तार था, जिसे भारत स्वीकार नहीं करता है।[2] भारत, जापान से नाराज नही था, भारत जापान में अमेरिकी हस्तक्षेप का विरोध कर रहा था। भारत ने 1952 में जापान से अलग से संधि की, यह शांति व मैत्रीय की संधि थी। जिससे जापान ने भारत के साथ अमेरिका के अलावा किसी देश से प्रथम बार स्वीकृति दी थी। इसके साथ ही भारत ने जापान के साथ कई सकारात्मक कदम भी उठाये –

- भारत ने जापान से युद्ध से प्राप्त क्षतिपूर्ति के दावे को त्याग दिया।
- भारत ने जापान को हितों की पैरवी करते हुए संयुक्त शक्तियों द्वारा जापान में स्थापित कब्जों को छोडने की बात कही।
- भारत ने जापान की अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय में भागीदारी बढानें की पहल की।
- भारत ने जापान को 1956 में संयुक्त राष्ट्र संघ की सदस्यता दिलाने की मांग की ।
- भारत ने 1958 में जापान से एक व्यापारिक संधि की व जापान को अतिविशिष्ट राष्ट्र का दर्जा दिया।[3]

नेहरू की विदेश नीति में जापान को पर्याप्त स्थान नही दिया गया, जिससे जापान के साथ भारत विदेश नीति सुविचारित आधार पर नही थी। नेहरू ने यद्यपि जापान की अक्टूबर 1957 में यात्रा की, परन्तु यथार्थ के धरातल पर किसी ठोस उपलब्धि का अभाव रहा। नेहरू गुटनिरपेक्षता व एशिया तथा अफ्रीका की एकता में ही लगे रहे व द्विपक्षीय संबंधो पर अधिक ध्यान नही दिया। नेहरू के बाद यथार्थवादी विदेश नीति अपनायी गयी, परन्तु तब तक जापान के साथ भारत के द्विपक्षीय संबंधो को मजबूत करने का समय निकल चुका था। 1980 तक भारत की जापान के प्रति विदेश नीति को दो पक्ष है।

- भारत ने 1945 से 1965 तक जापान की तरफ कोई विशेष ध्यान नही दिया। भारत ने जापान के प्रति कोई विशेष नीति नही अपनायी। ऐतिहासिक, सांस्कृतिक व धार्मिक संबंधो के बावजूद भारत ने 1965 तक जापान की उपेक्षा ही की।

- 1965 से 1980 तक भारत तो जापान के साथ सुदृढ व मित्रतापूर्ण संबंध बनाना चाह रहा था लेकिन शुरू में भारत द्वारा जापान की उपेक्षा करने से इस अवधि में भारत के कई प्रयासों के बावजूद जापान ने भारत की उपेक्षा की।

कुछ अन्तराल में ही भारत को अपने पडोसियों से तीन युद्ध लडने पडे। भारत व पाकिस्तान के बीच 1965 व 1971 में व भारत तथा चीन के बीच 1962 में इन युद्धों में भारत कठिनाईयों में ही रहा व जापान से समर्थन की भारत को उम्मीद थी परन्तु जापान भारत के विरोधियों के साथ खडा मिला, इससे भारत जापान संबंधो को चोट लगी।

भारत की विदेश नीति बहुमुखी है। भारत विश्व के व्यापक हितों के मुद्दों में रूचि लेता है तथा महाशक्तियों के प्रभुत्व व वर्चस्व का विरोध करता है। भारत जापान के साथ शान्ति, मित्रता व सहअस्तित्व की नीति ही अपनाता आया है। भारत जापान के किसी भी मुद्दे पर चुप नही रहा है। जापान के साथ सबंधो में भारत की नीति का आधार गुटनिरपेक्षता, साम्राज्यवाद उपनिवेशवाद का विरोध करना, एशिया–अफ्रीका एकता पर बल देना, हस्तक्षेप का विरोध, समानता की नीति अपनाना, संयुक्त राष्ट्र संघ को समर्थन देना आदि रहे है।

प्रशान्त महासागर में स्थित चार द्विपों के स्वामित्व के संबंध में रूस व जापान के बीच विवाद है। भारत इन द्विपों पर रूस का आधिपत्य स्वीकार किया है। इससे भी जापान भारत से नाराज रहा है। भारत जापान में अमेरिकी आधिपत्य, अमेरिकी सेना व अमेरिकी के सैनिक अड्डे को भी नही चाहता है। इससे जापान मन ही मन भारत से नाराजगी लिये हुए है।

भारत अपनी भूमिका से पूर्वी व पश्चिम जगत में मतभेद समाप्त करने का इच्छुक रहा है। बडे देश भारत की मध्यस्थता की नीति को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं है। जापान भी भारत की मध्यस्थता की नीति को स्वीकार करने के लिए तैयार नही है। भारत राजनीतिक संबंधो पर जोर देता रहा जापान ने 1980 के दशक में राजनीतिक संबंधो की जगह आर्थिक संबंधो पर जोर देना आरम्भ किया। 1965 से 1980 तक भारत द्वारा जापान से सुदृढ संबंध बनाने के लिए कई प्रयास किये गये, परन्तु संबंध सुधर नही पाये। 1971 में भारत सोवियत मैत्री संधि से जापान ने अपने आप ही नाराज हो गया व भारत को आर्थिक सहायता व रोक लगा दी। 18 मई 1974 को पोकरण में भारत परमाणु परीक्षण की व्यापक प्रतिक्रिया हुयी। परमाणु शक्ति के मामले में भारत ने किसी देश के दबाव में आया, न किसी देश के सामने झुका भारत ने भेदभाव पूर्ण परमाणु नीति की आलोचना की व जापान को भी अपने साथ लेकर चलने की नीति अपनायी, परन्तु शुरू की आलोचना के बाद जापान ने एन.पी.टी. पर हस्ताक्षर कर दिये। 1965 से 1980 तक की अवधि में भारत की जापान के प्रति विदेश नीति समान बनी रही, लेकिन संबंध समान नही रहे व उतार चढाव आते रहे।

1980 के बाद भारत की जापान के प्रति विदेश नीति में व्यापक परिवर्तन

भारत ने 19680 के बाद जापान के प्रति अपनी विदेश नीति में व्यापक परिवर्तन करते हुऐ इसे जापान के अनुकूलन बनाने का प्रयास किया। भारत ने आर्थिक संबंधो के सुधार व आर्थिक गतिविधियों में आदान–प्रदान बढाने की नीति अपनायी। अब भारत की नीति राजनीतिक मुद्दों से आर्थिक मुद्दों की तरफ रूपान्तरण हुआ, जो जापान में तो पहले ही हो गया था। भारत सरकार ने भारत में जापान के सहयोग से सुजुकी मारूति ऑटोमोबाल्स का कारखाना लगाने को मंजूरी दी। बाद में अन्य कई कम्पनियों को भारत में उद्योग लगाने की छुट दी गयी जैसे हीरोहोन्डा, यामाहा, सोनी, कैनन, नेशनल पैनासोनिक आदि।[4] भारत सरकार द्वारा दी गयी छूट से आज कई जापानी कम्पनियों भारत में अपना कारोबार कर रही है। भारत द्वारा दी गयी छुट से आज कई जापानी कम्पनियों ने भारत में अपना कारोबार कर रही है। भारत द्वारा दी गयी छूट का जापान ने भी लाभ कमाया है।

1985 में भारत के प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने जापान की यात्रा की व कई कम्पनियों को भारत में पूंजी निवेश के लिए कहा, जिसका प्रभाव यह पडा कि ऑटोमोबाइल्स व इलैक्ट्रोनिक सामान का उत्पादन करने वाली कई कम्पनियों भारत आयी।

1992 के बाद पी.वी नरासिम्ह राव ने उदारीकरण, निजीकरण व वैश्वीकरण की नीति अपनायी, जिसको जापान भी व्यापक समर्थन मिला। इस वैश्वीकरण के दोर में, जापानी बहुराष्ट्रीय कम्पनिया स्वतंत्रता पूर्वक भारत में व्यापार कर रही है। इससे दोनों देशों के व्यापारिक संबंध भी बढ रहे है। वैश्वीकरण व उदारीकरण से बडी अर्थव्यवस्था वाले उदारवादी देशों को अधिक लाभ हो रहा है। जिसमें जापान भी एक प्रमुख लाभ प्राप्त करने वाला देश है। इससे व्यापार में अभूतपूर्व वृद्धि हुयी है व अर्थव्यवस्था में सुधार आया है।

भारत ने 1994 में डब्ल्यू टी. ओ. को स्वीकार कर लिया, इससे भारत पर विश्व व्यापार संगठन के नियम लागू हो गये है। विश्व व्यापार संगठन के माध्यम से वैश्वीकरण व उदारवादी की नीतियों को लागू करने में सुविधा है। इससे भी जापान जैसे उदारवादी देश को भारत में व्यापार करने की सुविधाऐं प्राप्त हुयी है। शीतयुद्ध की समाप्ति के बाद राजनीतिक मुद्दे गौण हो गये व आर्थिक मुद्दे महत्वपूर्ण हो गये है। जापान देश ने अब खुल कर दूसरे देशों में पूंजी निवेश करना शुरू किया है। जो देश विश्व व्यापार संगठन के सदस्य है। जिनमें भारत भी है वहां जापान को अब निवेश के नुकसान की चिन्ता नही है, जबकि जापान को पहले यह चिन्ता रहती थी।

नरसिम्हाराव ने अपने प्रधानमंत्री काल में पूर्व की और देखों की नीति अपनायी, जिसमें मुख्य रूप से दक्षिणी पूर्वी एशिया के देशों के साथ संबंध सुधारने की नीति पर बल दिया गया था। दक्षिणी पूर्वी एशिया के साथ इस निति भारत की विदेश नीति में एक मील का पत्थर साबित हुयी है। इससे दक्षिणी पूर्वी एशिया के साथ सुदूरपर्वी एशिया के देशों मुख्य रूप से जापान के साथ भी संबंध सुधरे है, जापान को अत्यधिक महत्त्व दिया जाने लगा हैं विदेश नीति के सिद्धान्तों के निर्माणा के समय भी भारत व सुदूरपूर्व के देशों का ध्यान रखा जाता है, उन्हें विशेष महत्व दिया जाता है। जापान की आवश्यकताऐं भी बढ गयी है। इसलिए जापान भी भारत में अपना प्रसार बढाकर अधिक लाभ कमाना चाहता है। जापान एशिया में अपनी रूचि स्वतः ही बढ रही है। जापान भारत में कितनी ही सुविधाऐं प्राप्त करले परन्तु वह नाप तौल करके ही भारत के साथ संबंध विविध प्रकार के संबंध शुरू करता है। यदि किसी क्षेत्र में लाभ नही होता है तो जापान ऐसे कार्यक्रमों को निरस्त कर देता है। तथा संयुक्त उपक्रमों से हाथ खीच लेता है।

भारत की परमाणु नीति व जापान के लिए विदेश नीति का निर्धारण

भारत ने 18 मई 1974, 11 मई 1998 व 13 मई 1998 को पोकरण में परमाणु परीक्षण करके परमाणु क्षमता प्राप्त कर ली। भारत हमेशा कहता रहा है कि वह अपनी परमाणु शक्ति का प्रयोग शान्तिपूर्ण कार्यो में करेगा। बाद में मोरारजी देसााई, चरण सिंह देवगोडा, गुजराल व वाजपेयी ने परमाणु शक्ति के प्रयोग के विकल्प खुले रखने बात कही, शुरू में भारत व जापान की परमाणु शक्ति के संबंध में एकराय थी, बाद में जापान भारत से अलग होकर पश्चिम देशों के साथ हो गया। इतना ही नहीं जापान ने भारत द्वारा परमाणु परीक्षण की आलोचना की व भारत के खिलाफ आर्थिक प्रतिबन्ध भी लगा दिये, साथ ही सी.टी.बी.टी. पर हस्ताक्षर करने के लिए दबाव भी बनाया परन्तु 1992 में नरसिंह राव ने अपनी जापान यात्रा के समय यह स्पष्ट किया कि जापान की तरह भारत भी इस संधि को भेदभावपूर्ण मानता है, अन्तर केवल यही है कि जापान ने हस्ताक्षर कर दिये और हमने नहीं किये।[5] भारत परमाणु क्षेत्र में विभेदकारी नीतियों का विरोध करता है, अन्य देश भारत का विरोध करते है। भारत की विदेश नीति अपनी विदेश नीति है भारत न किसी से प्रभावित होती है, न किसी के दबाव में आता है। भारत स्वतंत्रता पूर्वक अपनी विदेश नीति का निर्धारण करता है व जापान के प्रति भी भारत ने अपनी विदेश नीतियों ने कोई दबाव में रहा, न किसी के हस्तक्षेप को स्वीकार किया। भारत ने जापान के प्रति भी अपनी विदेश नीति को स्वतंत्रतापूर्वक निर्धारित किया है।

एन.डी.ए. सरकार की जापान के प्रति विदेश नीति

वाजपेयी सरकार ने जापान की नीति में कोई व्यापक परिवर्तन नही किया। एन.डी.ए. सरकार ने नरसिम्हाराव की पूर्व की और देखो की नीति जारी रखी व इसे जापान पर भी लागू रखा। उदारीकरण व वैश्वीकरण का प्रभाव दिखने लगा। वाजपेयी सरकार ने भारत में जापानी निवेश को बढानें का प्रयास किया,

परन्तु मई 1998 में भारत द्वारा परमाणु परीक्षण करने पर एक बार तो जापान ने सारे निवेश अनुदान व सहायता कार्यक्रम बंद कर दिये। 2002 के बाद जापान ने धीरे–धीरे नियन्त्रणों को समाप्त किया व 2004 तक मई 1998 से पूर्व की स्थिति में आ सके। आस्ट्रेलिया के बाद जापान दुसरा प्रमुख देश था। जिसने भारत के परमाणु कार्यक्रम की आलोचना की व तीव्रगति से भारत पर प्रतिबंध लगाये।

एन.डी.ए. सरकार के समय भारत को पाकिस्तान के साथ कारगिल का युद्ध (जुलाई 1999) लडना पडा। इस युद्ध से भारत अपनी विदेश नीति पर इतना ध्यान नही दे पाया, जितना वह पहले दे रहा था। इससे भारत के द्विपक्षीय संबंध प्रभावित हुये व इनमें अपेक्षित सुधार नहीं हो सका।

एक अन्य प्रवृति एन.डी.ए. सरकार के समय में प्रभावी थी वह थी आतंकवाद में वृद्धि व इसका विश्वव्यापी रूप लेना। 11 सितम्बर 2001 को अमेरिका पर आतंकवादी हमला हुआ व 13 दिसम्बर 2001 को दिल्ली के संसद भवन पर भी आतंकवादी हमला हुआ। अब आतंकवाद ने व्यापक रूप ले लिया है। भारत ने इसके खिलाफ संघर्ष करने के लिए विश्व जापान सहित विश्व के देशों से सहयोग की अपील की। जापान ने आतंकवाद के मुद्दे पर भारत का पूर्ण समर्थन किया। आतंकवादी घटना किसी एक देश को ही प्रभावित नहीं करती, यह पूरे विश्व पर प्रभाव डालती है। जापान ने विश्व के कई देशों में निवेश किया है। आतंकवादी घटनायें होने पर जापान को भी नुकसान होता है अतः जापान ने आतंकवाद को समाप्त करने के लिए भारत को पूर्ण समर्थन दिया है।

यू. पी. ए. सरकार की जापान के प्रति विदेश नीति

यू. पी. ए. सरकार जापान के प्रति भारत की विदेश नीति के पूर्व सारे सिद्धान्तों को जारी रखा है। इन्हें जारी रखने के साथ मनमोहन सिंह ने उदारीकरण की नीति को व्यापक रूप से अपनाया है। इसे जापानी पूंजी निवेश भारत में बढा है। मनमोहन ने दिसम्बर 2006 व अक्टूबर 2008 में जापान की यात्राएं की है।[6] जापानी प्रधानमंत्री भी 2005 व 2007 में भारत आये है।[7] यो यात्राएं व्यापारिक यात्रायें थी। दोनों देशों को व्यापार में रूची है। पहले भारत आर्थिक सम्बन्धों में कम रूचि लेता था। उदारीकरण व वैश्वीकरण की नीतियों से व्यापारिक गतिविधियां बढ गयी है। भारत में व्यापारिक गतिविधियां बढना, जापान के लिए रूचिकर है। जापान ने भारत के अनुकूल परिस्थितियां पाकर निवेश व्यापार, संयुक्त उपक्रम व सहायत अनुदान भारत के लिए बढा दी है। भारत की अर्थव्यवस्थ स्थिर है व इसमें आज तक आर्थिक मंदी नही आयी। विश्व के कई देशों में आर्थिक मंदी आयी, जिससे उनकी अर्थव्यवस्था पर प्रभाव पडा। इण्डोनेशिया, मलेशिया, ब्राजील व स्वयं अमेरिका में आर्थिक मंदी आयी। भारत में मंदी का प्रभाव नही पडने से जापान का भारत के प्रति विश्वास बढा है। इससे जापान ने आर्थिक गतिविधियों में बढ चढकर रूचि लेना आरम्भ किया है।

बहुत सारे दबाव व कई परिस्थितियों के बावजूद भारत ने अपनी विदेश नीति के साथ कोई समझौता नहीं किया है। भारत की विदेश नीति के सिद्धान्त आज भी वही है जो पहले थे, केवल आर्थिक गतिविधियों के महत्व को स्वीकार किया है। इससे जापान सहित विश्व के देशों पर यह प्रभाव पडा है। कि भारत की विदेश नीति, स्थिर, स्थाई व अप्रभावित रहने वाली है। इससे जापान के लोगों में भारत के प्रति विश्वास बढा है।

भारत में इस समय अर्थशास्त्री प्रधानमंत्री है व वित्तमंत्री भी विशेषज्ञ है इस कारण भारत ने जापान के साथ व्यापारिक असंतुलन को दूर करने की नीति अपनायी है। इस नीति के अन्तर्गत जापान के साथ आयात को कम करना व निर्यात को बढ़ाना है। जापान भारत से कच्चा माल ही खरीदता है व तैयार सामान बेचता है इससे भारत को व्यापार में नुकसान होता है व भारत के लोगा का रोजगार छिन जाता है। जापान भारत के लौह अयस्क का सबसे अधिक खरीददार है। यू.पी.ए. सरकार ने इस असंतुलन को दूर करने की कोशिश की है। वैसे भारत का जापान के साथ व्यापार अन्य देशों की तुलना में कम ही है अत व्यापार को तो बढ़ाने की आवश्यकता है परन्तु जिस तरह की वस्तुएँ जापान भारत को निर्यात कर रहा है उन पर रोक लगाने से ही व्यापारिक असंतुलन दूर हो सकता है।

भारत की विदेश नीति को निर्धारण स्वतन्त्रता पूर्व ही होने लग गया था। भारत की विदेश नीति भारत की मान्यताओं के अनुसार ही रही है। इसमें अधिक परिवर्तन नहीं हुऐ है। आवश्यकता के अनुसार समय–समय पर इसमें विकास होता रहा है। विकास पुराने सिद्धान्तों की कीमत पर नहीं नई परिस्थितियों के साथ समायोजन के लिए होता रहा है।

भारत की विदेश नीति में सकारात्मक बदलाव ही आते रहे हैं, इन बदलावों से सरसता रोचकता व नवीनता बनी रहती है। भारत में नेहरू की विदेश नीति को अन्यों से अलग माना जाता है। नेहरू के युग में भारत की जापान के प्रतिनीति अधिक सक्रियता से शुरू हुयी, लेकिन वह काल्पनिक व आदर्शवादी ही बनी रही। 1955 से 1965 तक जापान की तरफ भारत ने उचित ध्यान नहीं दिया, इससे जापान ने स्वयं की अहेलना समझी व बाद में जापान ने भारत में रूचि लेना कम कर दिया।

1965 से भारत ने यथार्थवादी विदेश नीति अपनायी व जापान के साथ भी संबंध सुधारने पर जोर दिया। 1965 से 1980 तक जापान ने भारत की तरफ कम ध्यान दिया व भारत की अनदेखी ही करता रहा। भारत ने इसे अपमान तो नहीं माना, लेकिन मित्रतापूर्ण संबंधों में कमी आयी।

1980 से वर्तमान तक भारत की विदेश नीति जापान के साथ संबंध सुधारने की ही है। भारत ने यथासंभव संबंधों को प्रगाढ़ बनाने के नीति ही अपनायी है। 1980 के बाद जापान का आर्थिक विकास तीव्र गति से हुआ है। जापान के इस विकास को देखते हुए भारत ने महसूस किया है कि जापान से शुरू से ही भारत अच्छे संबंध विकसित कर लेता तो वर्तमान में संबंधो में और अधिक सुदृढता आती। भारत जापान के बीच संबंध कभी बिगडे नही थे, लेकिन इतने अधिक मित्रतापूर्ण भी नही हुये थे।

भारत की जापान के प्रति विदेश नीति का निर्धारण अन्य पक्षों से भी होता रहा है। 1970 से 1980 के दशक में भारत की सोवियत संघ से मित्रता का प्रभाव भारत जापान संबंधो पर पडा व दोनों के संबंध इतने अधिक विश्वसनीय नही रहे जितने होने चाहिये थे।

सोवियत संघ के विखण्डन के बाद व मुख्य रूप से यू. पी. ए. के शासन काल में भारत के अमेरिका के साथ अच्छे संबंधो के कारण भारत जापान संबंध भी अधिक मैत्रीपूर्ण बनते जा रहे है। आर्थिक रूप से जापान की अमेरिका से प्रतिस्पर्द्धा है, परन्तु राजनीति के रूप में जापान अमेरिकी रूख पर ही कायम रहता है। जापान आज इस स्थिति में कि वह अमेरिका का विरोध नही कर सकता।

1970 के दशक से विश्व में बड़े पैमाने पर क्षेत्रीय संगठनों का चलन बढ़ा है। युरोप में तो यह प्रक्रिया पहले से ही चल रही थी, एशिया आशियान के गठन से (1967) क्षेत्रीय संगठनों के निर्माण ने गति पकड़ी। जापान आसियान में भागीदारी चाह रहा था। इस उद्देश्य के लिए जापान ने आसियान की बैठकों में पर्यवेक्षक व अतिथि के रूप में भाग लेना शुरू किया। जापान में कच्चे माल की खुप कमी है। जापान कच्चे माल के लिए एशिया के देशों पर ही निर्भर है। शुरू में वह आसियान देशों से ही कच्चा माल आयात करता था। आसियान देशों में जागृति आने के बाद ये जापान के लिए समर्पित नहीं रहे। भारत ने आसियानों में भागीदारी बढ़ाने की कोशिश तो की परन्तु जापान भारत की आशियान में भागीदारी के लिए मना करता रहा, जिससे आसियान देशों ने भारत को किसी भी रूप में भाग लेन के लिए नहीं बुलाया जब से आसियान में जापान का प्रभाव कम हुआ है। (1990 के बाद से) तब से भारत ने आशियान में अपनी भागीदारी निभाना शुरू किया है। भारत 1992 में असियान का क्षेत्रीय वार्ता सहयोगी बना, 1995 में भारत आसियान का पूर्ण वार्ता सहयोगी बना, 1996 में भारत आसियान क्षेत्रीय मंच का सदस्य बना। 2000 के बाद भारत आसियान शिखर वार्ताए आयोजित की जाती है। 2009 में भारत ने आसियान से फ्री ट्रेड एग्रीमेन्ट (एफ.टी.ए.) भी किया है। जिसके अनुसार निश्चित वस्तुओं को बिना सीमा शुल्क दिये व्यापार करने की छूट होगी। अब भारत की आसियान में इतनी भागीदारी बढ़ गयी है। जितनी जापान की भी नहीं है। जापान इस कारण भारत से ईर्ष्या रखता है।

क्षेत्रीय संगठनों के दोर में दक्षिणी एशिया के देशों ने 1985 से दक्षिणी एशिया क्षेत्रीय सहयोग संगठन (सार्क) का गठन किया है। सार्क, सदस्य देशों में आर्थिक सहयोग बढ़ाने का एक संगठन है। दक्षिणी एशिया में

क्षेत्रीय संगठन (सार्क) के बनाने से जापान इसके विरूद्ध है। के गठन से दक्षिणी एशिया के देशों में उपभोक्ता बाजार नहीं मिलेगा इससे उसको आर्थिक नुकसान होगा। जापान को इन देशों से कच्चा माल प्राप्त करने में भी समस्या आयेगी। क्षेत्रीय संगठनों के बनने से जापान को आर्थिक नुकसान हो रहा है। अतः जापान मूल रूप से क्षेत्रीय संगठनों के विरूद्ध है। जापान किसी क्षेत्री संगठन में शामिल भी नही है वह तो पूरे विश्व को ही अपना बाजार समझता है। आशियान की तरह सार्क से भी भारत जापान संबंधो में मधुरता नही आ रही है।

भारत की विदेश नीति के कुछ पक्षों से भारत जापान संबंधो पर विपरीत प्रभाव पडता है। तो कुछ पक्षों से अनुकूल प्रभाव भी पडता है। भारत 1994 में डब्ल्यू टी. ओ. का सदस्य बना है। इससे भारत में उदारीकरण व वैश्वीकरण को वैधानिक मान्यता मिल गयी है। यह जापान के अनुकूल है। इससे जापान को भारत में अवाध रूप से व्यापार करने का वैधानिक अधिकार मिल गया है। इससे भारत जापान संबंधो में सकारात्मक विकास होगा। 2011 में भारत जापान के मध्य द्विपक्षीय व्यापार समझोता हुआ और 2016 में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी द्वारा परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण उपयोग के लिए समझौता किया।

निष्कर्ष

इस प्रकार भारत–जापान संबंधो में हमेशा उतार चढाव आते है। 1991 के बाद उदारीकरण के दौर के बाद आपसी संबंधो में स्थिरता आयी है क्योंकि भारत एशिया महाद्वीप में ही नही बल्कि सम्पूर्ण विश्व में एक उभरता हुआ शक्तिशाली राष्ट्र है। भारत विश्व का सबसे बडा बाजार भी है जिससे वस्तुओं का आयात ज्यादा होता है अतः जापान जैसा तकनीकी राष्ट्र उस राष्ट्र के साथ विदेशिक संबंध खराब नही करेगा जहां सबसे ज्यादा वस्तुओं की डिमांड हो।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. क्रॉनिकल इयरबुक 2011, (क्रॉनिकल पब्लिकेशंस नई दिल्ली, 2011) पेज. 95।
2. यादव, आर. एस. ''भारत की विदेश नीति : एक विश्लेषण'' (किताब महल इलाहाबाद, 2005) पेज 344।
3. यादव, आर. एस. ''भारत की विदेश नीति : एक विश्लेषण'' (किताब महल इलाहाबाद, 2005) पेज 345।
4. पन्त पुष्पेष, ''भारत की विदेश नीति'' (टाटा मेग्राहिल प्रकाशन नई दिल्ली, 2010) पेज. 8।
5. घई यु. आर. ''भारतीय विदेश नीति'' (न्यू एकेडमिक पब्लिशिंग कम्पनी जालधर 2009), पेज. 529।
6. राज विवेक एस. ''भारतीय विदेश नीति'' (सिविल सर्विसेज टाइम्स प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010) पेज. 166।
7. राज विवेक एस. ''भारतीय विदेश नीति'' (सिविल सर्विसेज टाइम्स प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010) पेज. 166।

❖◆❖